IJARSCT
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
ISSN: 2581-9429
Volume 6, Issue 1, June 2020
Impact Factor: 4.819

सैद्धान्तिक समीक्षा और आ. रामचन्द्र शुक्ल - 3

डॉ अजय कुमार बिन्द
अिस. प्रो. हिंदी
राजकीय महाविद्यालय नानौता, सहारनपुर
drajaybind@gmail.com

आ.शुक्ल के अनुसार साहित्य केवल मनोरंजन मात्र ही नहीं है। वे कहते हैं– "वास्तव में कला की दृष्टि दोनों प्रकार (करुणा, प्रेमभाव अर्थात् प्रयत्न पक्ष या आनंद की साधनावस्था तथा आनन्द का उपभोग पक्ष) का काव्यों में अपेक्षित है। वे मानते हैं कि काव्य का उद्देश्य पाठक या श्रोता को संकीर्णता से मुक्त कर लोक सामान्य भावभूमि पर ले आना है। साधनावस्था या प्रयत्न पक्ष को लेकर चलने वाले काव्यों में भी चूक हुई तो लोक गति को परिचालित करने वाली स्थायी प्रभाव न उत्पन्न हो सकेगा। यहीं तक नहीं, व्यंजित भावों के साथ पाठकों के सहानभूति या साधारीकरण तक जो रस की पूर्ण अनुभूति के लिए आवश्यक है, ना हो सकेगा।"24 करुणा सामाजिकता का मूल आधार है। राम द्वारा रावण के वध में यही भाव प्रमुख है। रावण यहाँ आततायी है। प्रबन्ध काव्य में आ.शुक्ल के आग्रह का कारण भी यही करुणा है। आ.शुक्ल का मत था कि भारतीय परम्परा सदैव से भगवान् को लोक के बीच प्रतिष्ठित करती रही हृदय के कोने में नहीं। राम के रावण के वध के सदृश क्रोध में लोकोत्तर सौन्दर्य का यही कारण है। प्रकार क्रोधादि प्रचण्ड भावों की व्यंजना में भी जहाँ करुणा विद्यमान है, तो उनमें भी पूर्ण सौन्दर्य परिलक्षित होता है। आ.शुक्ल का यह लोकधर्म ही है। इस लोक धर्म के अन्तर्गत समस्त लोक मर्यादाओं और लोक व्यवहारों की प्रतिष्ठा है। आ.शुक्ल ने कविता को परिभाषित करते हुए कहा कि– "जिस प्रकार आत्मा की मुक्तावस्था ज्ञानदशा कहलाती है, उसी प्रकार हृदय की यह मुक्तावस्था रसदशा कहलाती है। हृदय की इसी मुक्ति साधना के लिए मनुष्य की वाणी जो शब्द विधान करती आई है उसे कविता कहते हैं।25 इस साधना को हम भावयोग कहते हैं और कर्म योग और ज्ञान योग का समकक्ष मानते हैं।" इसका तात्पर्य यह है कि आ.शुक्ल काव्य को वैयक्तिक भूमि से उठाकर एक उच्च सामाजिक अथवा लोक-व्याप्त भूमि पर प्रतिष्ठित करते हैं। भट्टनायक का भावकत्व व्यापार भी यही है तथा आ.विश्वनाथ की 'रसात्मक' वाक्य की अवस्था भी यही है। किसी कवि पर विचार करते समय आ.शुक्ल दो बातें आवश्यक मानते

ISSN 2581-9429 IJARSCT

हैं– "भावात्मक सत्ता का विस्तार (मानव प्रकृति के अधिकाधिक रूपों के साथ कवि के हृदय का सामंजस्य) तथा भावों की गहराई या सघनता।"26 आ.शुक्ल के अनुसार सारा संसार काव्य का विषय है।रस व भाव को आ.शुक्ल ने आत्म तत्व के रूप में निरुपण किया है तथा अलंकार को बाह्य तत्व के रूप में। उनके अनुसार –अलंकार (अप्रस्तुत) योजना प्रस्तुत रूप के प्रभाव को बढ़ाने के लिए होनी चाहिए। अलंकार साधन है, साध्य नहीं।

भाषा को भी आ.शुक्ल ने काव्य का बाहरी तत्व ही माना है। उन्होंने रस और भावों के अनुकूल भाषा का समर्थन किया है। उन्हें भाषा का स्वाभाविक रूप ही अभिप्रेत था। काव्य की रमणीयता को उन्होंने वाच्यार्थ में माना- लक्ष्यार्थ या व्यंग्यार्थ में नहीं। डॉ. रामाधार शर्मा के अनुसार -"आ.शुक्ल ने कविता की भाषा की चार विशेषताएँ बतलाई हैं–लाक्षणिकता, विशेष रूप-व्यापार सूचक, शब्द - वर्ण विन्यास तथा व्यक्तियों के नाम के स्थान पर रूप -गुण या कार्यबोधक शब्दों का प्रयोग।"27 आ.शुक्ल सर्व साधारण की भाषा एवं काव्य की भाषा में अन्तर मानते। काव्य - भाषा रस भूमि की मीपवर्तिनी है, साधारणीकरण की सहायिका है। उसमें साहित्यिकता है। आ.शुक्ल का भाषा - विवेचन,रस- द्धान्त के अनुकूल ही है साथ ही हिंदी साहित्य के इतिहास में साहित्य की भाषा के जातीय रूप की पहचान और रक्षा पर बार-बार बल दिया है। वे भाषा की सामाजिकता के समर्थक हैं। आ.शुक्ल छन्द को काव्य के लिए आवश्यक मानते हैं लेकिन छन्द भावा के अनुरूप हों। वे कहते हैं - छन्द के बन्धन में अनुभूत नाद- सौन्दर्य की प्रेषणीयता सहज हो जाती है। आ. शुक्ल नें कहा है–"छन्द द्वारा होता यह है कि इन ढाँचों की भिति और इनके योग की भिति दोनों श्रोता को ज्ञात हो जाती है। जिससे वह भीतर ही भीतर पढ़ने वाले के साथ ही साथ नाद की गति में योग देता चलता है।"28 आ.शुक्ल ने पाश्चात्य समीक्षा साहित्य का भी अध्ययन किया और अपनी समीक्षा दृष्टि में उसका प्रयोग भी किया है–"किसी भावोद्रेक द्वारा परिचालित भीतरीवृत्ति जब उस भाषा का पोषक स्वरूप गढ़कर या काट -छाँटकर सामने रखने लगती हैं तब हम उसे सच्ची कवि कल्पना कह सकते हैं।"29 आ.शुक्ल सौन्दर्य नें सौंदर्य को वस्तुगत मानते हैं, व्यक्तिगत नहीं, जैसे–वीर कर्म से पृथक् वीरत्व कोई पदार्थ नहीं,उसी प्रकार सुन्दर वस्तु से पृथक् सौन्दर्य कोई पदार्थ नहीं है।''30 आ.शुक्ल की सौन्दर्य सम्बन्धी यह विचार दृष्टि वस्तुवादी दृष्टिकौण का ही परिणाम है। काव्य में उन्होंने आलम्बन को, काव्य विषय को ही सर्वप्रथम स्थान दिया है। आ.शुक्ल ने प्राचीन काव्य का अध्ययन अधिकाधिक किया है। उनके समय तक गद्य साहित्य प्रचुर मात्रा में प्रकाशित हो चुका था, लेकिन आ.शुक्ल का ध्यान इस ओर

IJARSCT
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
ISSN: 2581-9429
Volume 6, Issue 1, June 2020
Impact Factor: 4.819

कम गया है। इसलिए उनके साहित्यिक सिद्धांत काव्य अध्ययन पर आधारित हैं। साहित्यिक रूपों प्रबंध काव्य व गीत काव्य पर विस्तृत आलोचना किया है। प्रबंधक काव्य को उन्होंने मानव जीवन का पूर्ण चित्रण माना है।आ. शुक्ल का मत है कि गीत काव्य में प्रस्तुत रूप में लाये हुए पदार्थ और व्यापारों की संख्या परिमित होती है। इसमें मधुर ध्वनि-प्रवाह के बीच कुछ चुने हुए पदार्थो और व्यापारो की झलक पर्याप्त होती है।"31 छायावादी काव्य के सम्बन्ध में शुक्लजी की दृष्टि नकार की रही है। सबसे पहले तो उन्हें छायावाद में पाश्चात्यपन का खटका था, दूसरा इसका लक्ष्य शैली की ओर बताया। वस्तु -विधान की ओर नहीं, तीसरा इसमें अलौकिक प्रेम के बहाने प्रणय वासना का उदगार कहा। परन्तु जहाँ जीवन और जगत से सम्बन्ध था,वहाँ उन्होंने छायावाद की सराहना की है।रहस्यवाद के लिए उन्होंने कहा है कविता का संबंध बाहय की व्यक्त सत्ता से है, अव्यक्त सत्ता से नहीं। रीतिकाल की श्रृंगारी कविता व कलावाद का विरोध ही किया गया है।

आ. शुक्ल ने काव्य के दो पक्ष माने हैं– अनुभूति तथा सौंदर्य पक्ष। उनका सौन्दर्य पक्ष वाच्यार्थ में ही सुरक्षित है तथा अनुभूति पक्ष लक्ष्यार्थ अथवा व्यंग्यार्थ के माध्यम से व्यक्त होता है, पर वाच्यार्थ से बहिर्गत होने पर काव्य संज्ञा से अलग हो जाता है।निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि आ.शुक्ल ने गुण-दोष कथन से आगे बढ़कर कवियों की विशेषताओं और उनकी अन्तःवृत्तियों की छान-बीन की है। आपने समूचे भारतीय आलोचनाशास्त्र का आधुनिकीकरण किया। यह कार्य आ.शुक्ल ने समीक्षा के द्वारा किया। विश्वनाथ त्रिपाठी कहते हैं– "...शुक्लजी की रचनाओं के कारण हिन्दी की समालोचना ने नये युग में पदार्पण किया। हिन्दी साहित्य की किसी एक विधा को कभी किसी एक साहित्यकार ने इतना अधिक प्रभावित नहीं किया था।"32 छायावादी काव्य के सम्बन्ध में शुक्लजी की दृष्टि नकार की रही है। सबसे पहले तो उन्हें छायावाद में पाश्चात्यपन का खटका था, दूसरा इसका लक्ष्य शैली की ओर बताया। वस्तु -विधान की ओर नहीं, तीसरा इसमें अलौकिक प्रेम के बहाने प्रणय वासना का उदगार कहा। परन्तु जहाँ जीवन और जगत से सम्बन्ध था,वहाँ उन्होंने छायावाद की सराहना की है।रहस्यवाद के लिए उन्होंने कहा है कविता का संबंध बाहय की व्यक्त सत्ता से है, अव्यक्त सत्ता से नहीं। रीतिकाल की श्रृंगारी कविता व कलावाद का विरोध ही किया गया है।आ. शुक्ल ने काव्य के दो पक्ष माने हैं– अनुभूति तथा सौंदर्य पक्ष। उनका सौन्दर्य पक्ष वाच्यार्थ में ही सुरक्षित है तथा अनुभूति पक्ष लक्ष्यार्थ अथवा व्यंग्यार्थ के माध्यम से व्यक्त होता है, पर वाच्यार्थ से बहिर्गत होने पर काव्य संज्ञा से अलग हो जाता है।

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि आ.शुक्ल ने गुण-दोष कथन से आगे बढ़कर कवियों की विशेषताओं और उनकी अन्तःवृत्तियों की छान-बीन की है। आपने समूचे भारतीय आलोचनाशास्त्र का आधुनिकीकरण किया। यह कार्य आ.शुक्ल ने समीक्षा के द्वारा किया। विश्वनाथ त्रिपाठी कहते हैं– "...शुक्लजी की रचनाओं के कारण हिन्दी की समालोचना ने नये युग में पदार्पण किया। हिन्दी साहित्य की किसी एक विधा को कभी किसी एक साहित्यकार ने इतना अधिक प्रभावित नहीं किया था।"32 आ.शुक्ल की सैद्धांतिक समीक्षा का निष्कर्ष यह है की काव्य का मुख्य उद्देश्य लोकमंगल की साधना (समाज का कल्याण) है, न कि केवल मनोरंजन। उन्होंने रस सिद्धांत को लोक-भूमि से जोड़कर, उसे भावात्मक और मनोवैज्ञानिक आधार प्रदान किया। आ.शुक्ल ने भारतीय काव्यशास्त्र की शास्त्रीय और पाश्चात्य समीक्षा की वैज्ञानिकता का समन्वय कर हिंदी आलोचना को सुव्यवस्थित किया।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची -

24.आ.शुक्ल-रस मीमांसा, पृ. 57
25आ. शुक्ल, चिन्तामणि, भाग-1, पृ. 141
26.आ.शुक्ल - गो. तुलसीदास, पृ. 75
27.डॉ. रामाधार शर्मा- हिन्दी की सैद्धान्तिक समीक्षा, पृ.111
28आ. शुक्ल-चिन्तामणि, भाग-2, पृ. 159
29.आ. शुक्ल, भ्रमरगीतसार, भूमिका, पृ. 297
30.आ. शुक्ल, चिन्तामणि, भाग-1, पृ. 146
31.आ. शुक्ल, भ्रमरगीतसार, पृ. 6
32.विश्वनाथ त्रिपाठी - हिंदी आलोचना, पृ. 49-50